CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हि. पु ३३
१२३६

VHP
6.63

बालबोध पाठशाला

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राप्ति-संख्या.....
कार्ड
जैन (शोध) संस्थान
गार
राणसी-५
पाठमाला भाग ३
द गाथिल्ल

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री गणेश वर्णी दि. जैन (जोन) संस्थान
पुस्तक सं. 923e
दिनांक
नरिया, (का. हि. वि. वि.) वाराणसी

[श्री टोडरमल ग्रन्थमाला का ग्यारहवाँ पुष्प]

बालबोध पाठमाला

भाग ३

हि० ५४३

कृपया इस ग्रन्थको निम्नांकित तिथि पर या उसके पूर्व

लेखक व सम्पादक :
पं० हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, एम० ए०, साहित्यरत्न
संयुक्तमंत्री, श्री टोडरमल स्मारक भवन, जयपुर

प्रकाशक :
मंत्री, श्री टोडरमल स्मारक भवन
ए-४, बापूनगर, जयपुर-४ (राज०)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथमावृत्ति : ११,०००
महावीर जयंती, वि० सं० २०२६
दिनांक ३१ मार्च, १९६९
मूल्य : ५५ पैसे

मुद्रक :
जयपुर प्रिण्टर्स
मिर्जा इस्माइल रोड
जयपुर (राज०)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समर्पणम्

इस भौतिकवादी युग में, जबकि सम्पूर्ण विश्व भोगोन्मुख हो रहा है तथा अशान्ति की ज्वाला से सन्तप्त है, ऐसे समय में जिन्होंने आध्यात्मिकता का प्रसार और प्रचार कर अपूर्व आत्म-शान्ति का पथ प्रशस्त किया है और स्वयं निरन्तर आत्म-साधना में रत हैं, तथा मोह में गहल हम जैसे पामर प्राणियों को जिन्होंने मुक्ति का मार्ग दिखाकर हम पर महान-महान उपकार किया है; परम पूज्य आचार्य धरसेन, कुन्द-कुन्द, उमास्वामी, समन्तभद्र, अमृतचन्द्र, नेमिचन्द्र आदि वीतरागी दिगम्बर मुनिवरों में है अपार भक्ति जिनकी तथा पण्डितप्रवर पाण्डे राजमलजी, कविवर पं० बनारसीदासजी और आचार्यकल्प पं० टोडरमलजी के प्रति है अपार श्रद्धा जिनकी; उन जिनवाणी के परम भक्त व प्रबल प्रचारक आध्यात्मिक सन्त पूज्यवर श्री कानजी स्वामी के कर-कमलों में सादर सविनय समर्पित।

पूरणचन्द गोदीका
अध्यक्ष

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निवेदन

जिज्ञासु पाठकगण !

प्रस्तुत कृति कोमलमति बालकों को तत्त्वबोध कराने के उद्देश्य से श्री टोडरमल स्मारक भवन द्वारा गठित पाठ्यक्रम समिति द्वारा तैयार कराई गई है। इसमें यह ध्यान रखा गया है कि सरल भाषा और सुबोध शैली में बालकों को तत्त्वज्ञान की प्राप्ति तो हो ही, साथ ही वे नैतिक भी बनें, उनके चरित्र का निर्माण हो तथा उन्हें अपने प्राचीन गौरव से भी प्रेरणा मिल सके। अतएव इसमें तात्त्विक पाठों के साथ-साथ सदाचार सम्बन्धी पाठ एवं पुराण-पुरुषों के जीवन-परिचय भी दिये गये हैं तथा उनमें धार्मिक संस्कार दृढ़ हों, तदर्थ स्तुतियों को भी स्थान दिया गया है।

इस प्रकार पुस्तक को सर्वांगसुन्दर एवं उपयोगी बनाने का प्रयास किया गया है। यदि इस प्रयत्न द्वारा बालकों को थोड़ा भी लाभ मिला तो हम अपने प्रयत्नों को सार्थक समझेंगे।

तथा पाठक-बन्धुओं की सुविधा एवं कुशल अध्यापन को दृष्टि में रखकर पाठ्यक्रम समिति ने प्रशिक्षण-पाठ्यक्रम की योजना भी बनाई है, जिसके माध्यम से ग्रीष्मावकाश में २० दिन के शिविरों द्वारा अध्यापक महानुभावों को सर्व प्रकार की सुविधायें प्रदान कर अध्यापन की प्रायोगिक एवं सैद्धान्तिक पद्धति से परिचित कराया जायगा।

निवेदक :

नेमीचंद पाटनी — मंत्री

पूरणचंद गोदीका — अध्यक्ष

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषय-सूची

क्रम	नाम पाठ	पृष्ठ
१.	देव-दर्शन	२
२.	षट् आवश्यक	६
३.	पंच परमेष्ठी	११
४.	गतियाँ	१६
५.	सदाचार	२१
६.	द्रव्य गुण पर्याय	२४
७.	भगवान नेमिनाथ	३०
८.	जिनवाणी स्तुति	३४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठ पहला

देव-दर्शन

अति पुण्य उदय मम आया, प्रभु तुमरा दर्शन पाया।
अब तक तुमको बिन जाने, दुख पाये निज गुण हाने ॥

पाये अनंते दुःख अब तक, जगत को निज जानकर।
सर्वज्ञ भाषित जगत हितकर, धर्म नहिं पहिचान कर ॥

भव बंधकारक सुखप्रहारक, विषय में सुख मानकर।
निज पर विवेचक ज्ञानमय, सुखनिधि-सुधा नहिं पान कर ॥१॥

तब पद मम उर में आये, लखि कुमति विमोह पलाये।
निज ज्ञान कला उर जागी, रुचि पूर्ण स्वहित में लागी ॥

रुचि लगी हित में आत्म के, सतसंग में अब मन लगा।
मन में हुई अब भावना, तव भक्ति में जाऊँ रँगा ॥

प्रिय वचन की हो टेव, गुणिगण गान में ही चित पगै।
शुभ शास्त्र का नित हो मनन, मन दोष वादनतैं भगै ॥२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देव-दर्शन का सारांश

हे वीतराग सर्वज्ञ प्रभो ! आज मैंने महान् पुण्योदय से आपके दर्शन प्राप्त किये हैं। आज तक आपको जाने बिना और अपने गुणों को पहिचाने बिना अनंत दुःख पाये हैं।

मैंने इस संसार को अपना जानकर और सर्वज्ञ भगवान द्वारा कहे गये, आत्मा का हित करने वाले वीतराग धर्म को पहिचाने बिना अनंत दुःख प्राप्त किए हैं। आज तक मैंने संसार बढ़ाने वाले, और सच्चे सुख का नाश करने वाले पंचेंद्रिय के विषयों में सुख मान कर, सुख के खजाने स्वपर भेद-विज्ञान रूप अमृत का पान नहीं किया है ॥१॥

पर आज आपके चरण मेरे हृदय में बसे हैं, उन्हें देखकर कुबुद्धि और मोह भाग गये हैं। आत्मज्ञान की कला हृदय में जागृत हो गई है, और मेरी रुचि आत्महित में लग गई है। सत्समागम में मेरा मन लगने लगा है। अतः मेरे मन में यह भावना जागृत हो गई है कि आपकी भक्ति ही में रमा रहूँ।

हे भगवन् ! यदि बचन बोलूँ तो आत्महित करने वाले प्रिय वचन ही बोलूँ। मेरा चित्त गुणीजनों के गान में ही रहे अथवा आत्महित के निरूपक शास्त्रों के अभ्यास में ही लगा रहे। मेरा मन दोषों के चिंतन और वाणी दोषों के कथन से दूर रहे ॥२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कब समता उर में लाकर, द्वादश अनुप्रेक्षा भाकर।
ममतामय भूत भगाकर, मुनिव्रत धारूँ वन जाकर॥

धरकर दिगंबर रूप कब, अठ-बीसगुण पालन करूँ।
दो-बीस परिषह सह सदा, शुभ धर्म दश धारन करूँ॥

तप तपूँ द्वादश विधि सुखद नित, बंध आश्रव परिहरूँ।
अरु रोकि नूतन कर्म संचित, कर्म रिपुकों निर्जरूँ॥३॥

कब धन्य सुअवसर पाऊँ, जब निज में ही रम जाऊँ।
कर्तादिक भेद मिटाऊँ, रागादिक दूर भगाऊँ॥

कर दूर रागादिक निरंतर, आत्म को निर्मल करूँ।
बल ज्ञान दर्शन सुख अतुल, लहि चरित क्षायिक आचरूँ॥

आनन्दकन्द जिनेन्द्र बन, उपदेश को नित उच्चरूँ।
आवै 'अमर' कब सुखद दिन, जब दुखद भवसागर तरूँ॥४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेरे मन में यह भाव जग रहे हैं कि – वह दिन कब आयगा जब मैं हृदय में समता भाव धारण करके, बारह भावनाओं का चिंतवन करके तथा ममतारूपी भूत (पिशाच) को भगाकर वन में जाकर मुनि दीक्षा धारण करूँगा। वह दिन कब आयगा जब मैं दिगम्बर वेष धारण करके अट्ठाईस मूलगुण धारण करूँगा, बाईस परिषहों पर विजय प्राप्त करूँगा और दश धर्मों को धारण करूँगा, सुख देने वाले बारह प्रकार के तप तपूँगा और आश्रव और बंध भावों को त्याग नये कर्मों को रोककर संचित कर्मों की निर्जरा कर दूँगा ।।३।।

वह धन्य घड़ी कब होगी जब मैं अपने में ही रम जाऊँगा। कर्त्ता-कर्म के भेद का भी अभाव करता हुआ राग-द्वेष दूर करूँगा और आत्मा को पवित्र बनालूँगा – जिससे आत्मा में क्षायिक चारित्र प्रकट करके अनंतदर्शन, अनंतज्ञान, अनंतसुख और अनंतवीर्य से युक्त हो जाऊँगा। आनंदकन्द जिनेन्द्रपद प्राप्त कर लूँगा। मेरा वह दिन कब आवेगा जब इस दुःखरूपी भवसागर को पार कर अमर पद प्राप्त करूँगा ।।४।।

उक्त स्तुति में देव-दर्शन से लेकर देव (भगवान) बनने तक की भावना ही नहीं आई है किंतु भक्त से भगवान बनने की पूरी प्रक्रिया ही आ गई है।

प्रश्न –

१. उक्त स्तुति में कोई भी एक छंद जो तुम्हें रुचिकर हुआ हो, अर्थ सहित लिखिये एवं रुचिकर होने का कारण भी दीजिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठ दूसरा

षट् आवश्यक

(मंदिरजी में शास्त्र-प्रवचन हो रहा है। पंडितजी शास्त्र-प्रवचन कर रहे हैं और सब श्रोता रुचिपूर्वक श्रवण कर रहे हैं।)

प्रवचनकार – संसार के समस्त प्राणी सुख चाहते हैं और दुःख से डरते हैं, और उन दुःखों से बचने के लिये उपाय भी करते हैं, पर उनसे बचने का सही उपाय नहीं जानते हैं, अतः दुःखी ही रहते हैं।

एक श्रोता – तो फिर दुःख से बचने का सच्चा उपाय क्या है ?

प्रवचनकार – आत्मा को समझकर उसमें लीना होना ही सच्चा उपाय है और यही निश्चय से आवश्यक कर्त्तव्य है।

दूसरा श्रोता – आप तो साधुओं की बात करने लगे, हम सरीखे गृहस्थ सच्चा सुख प्राप्त करने के लिये क्या करें ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

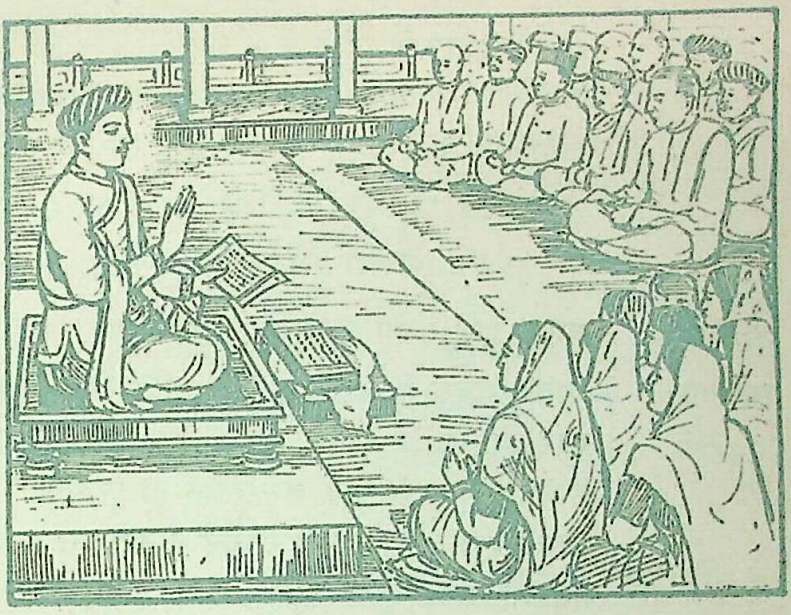

प्रवचनकार – दुःख मेटने और सच्चा सुख प्राप्त करने का उपाय तो सबके लिये एक ही है।

यह बात अलग है कि मुनिराज अपने उग्र पुरुषार्थ से आत्मा का सुख विशेष प्राप्त कर लेते हैं और गृहस्थ अपनी भूमिकानुसार अंशतः सुख प्राप्त करता है।

उक्त मार्ग में चलने वाले सम्यग्दृष्टि श्रावक के आंशिक शुद्धिरूप निश्चय आवश्यक के साथ-साथ शुभ विकल्प भी आते हैं। उन्हें व्यवहार-आवश्यक कहते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वे छह प्रकार के होते हैं –

देवपूजा गुरूपास्ति, स्वाध्यायः संयमस्तपः ।
दानञ्चेति गृहस्थानां, षट कर्माणि दिने दिने ।।

१. देवपूजा ३. स्वाध्याय ५. तप
२. गुरु की उपासना ४. संयम ६. दान

श्रोता – कृपया इन्हें संक्षेप में समझा दीजिये ।

प्रवचनकार – ज्ञानी श्रावक के योग्य आंशिक शुद्धि निश्चय से भाव-देवपूजा है और सच्चे देव का स्वरूप समझकर उनके गुणों का स्तवन ही व्यवहार से भाव-देवपूजा है । ज्ञानी श्रावक वीतरागता और सर्वज्ञता आदि गुणों का स्तवन करते हुये विधि-पूर्वक अष्ट द्रव्य से पूजन करते हैं उसे द्रव्यपूजा कहते हैं ।

इसी प्रकार ज्ञानी श्रावक के योग्य आंशिक शुद्धि ही निश्चय से गुरु-उपासना है और गुरु का सच्चा स्वरूप समझकर उनकी उपासना करना ही व्यवहार-गुरु-उपासना है ।

तुम्हें पहिले बताया जा चुका है कि अरहंत, और सिद्ध भगवान देव कहलाते हैं और आचार्य उपाध्याय और साधु गुरु कहलाते हैं ।

ज्ञानी श्रावक के योग्य आंशिक शुद्धि ही निश्चय से स्वाध्याय है तथा जिनेन्द्र भगवान द्वारा कहे गये तत्त्व का निरूपण करने वाले शास्त्रों का अध्ययन, मनन करना व्यवहार-स्वाध्याय है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रोता – यह तो तीन हुए।

प्रवचनकार – सुनो ! ज्ञानी श्रावक के योग्य आंशिक शुद्धि ही निश्चय से संयम है और उसके साथ होने वाले भूमिकानुसार हिंसादि से विरति एवं इन्द्रिय-निग्रह व्यवहार-संयम हैं।

ज्ञानी श्रावक के योग्य आंशिक शुद्धि अर्थात् शुभाशुभ इच्छाओं का निरोध (उत्पन्न नहीं होना) निश्चय-तप है तथा उसके साथ होने वाले अनशनादि संबंधी शुभभाव व्यवहार-तप है।

ज्ञानी श्रावक के योग्य आंशिक शुद्धि वह निश्चय से अपने को शुद्धता का दान है तथा स्व और पर के अनुग्रह के लिये धनादि देना व्यवहार-दान है। वह चार प्रकार का होता है–

१. आहारदान ३. औषधिदान
२. ज्ञानदान ४. अभयदान

श्रोता – निश्चय और व्यवहार आवश्यक में क्या अंतर है ?

प्रवचनकार – निश्चय आवश्यक तो शुद्ध धर्म परिणति है, अतः बंध के अभाव का कारण है तथा व्यवहार आवश्यक पुण्य बंध का कारण है। सच्चे आवश्यक ज्ञानी जीव के ही होते हैं। पर देवपूजनादि करने का भाव अज्ञानी के भी होता है तथा मंद कषाय और शुभ भावानुसार पुण्य बंध भी होता है, पर वे सच्चे धर्म नहीं कहे जा सकते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रोता – यदि आप ऐसा कहोगे तो अज्ञानी जीव देव-पूजनादि आवश्यक कर्मों को छोड़ देंगे।

प्रवचनकार – भाई ! उपदेश तो ऊँचा चढ़ने को दिया जाता है। अतः देवपूजनादि के शुभ भाव छोड़कर यदि अशुभ भाव में जावेंगे तो पाप बंध करेंगे। अतः देवपूजनादि छोड़ना ठीक नहीं है।

प्रश्न –

१. संसार के दुःखों से बचने का सच्चा उपाय क्या है ?

२. आवश्यक किसे कहते हैं ? गृहस्थ के आवश्यक कार्य कौन २ से हैं ?

३. निश्चय से आवश्यक क्या है ?

४. छह आवश्यकों के नाम लिखकर उनकी परिभाषायें दीजिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठ तीसरा

पंच परमेष्ठी

णमो अरिहंताणं;
णमो सिद्धाणं,
णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं;
णमो लोए सव्व साहूणं॥

यह पंच नमस्कार मंत्र है। इसमें सबसे पहिले पूर्ण वीतरागी और पूर्ण ज्ञानी अरहंत भगवानों को और सिद्ध भगवानों को नमस्कार किया गया है। उसके बाद वीतराग मार्ग में चलने वाले मुनिराजों को नमस्कार किया गया है जिनमें आचार्य मुनिराज, उपाध्याय मुनिराज और सामान्य मुनिराज सब आ जाते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु इनको पंच परमेष्ठी कहते हैं। अरहंतादिक परमपद हैं और जो परमपद में स्थित हों उन्हें परमेष्ठी कहते हैं। पाँच प्रकार के होने से उन्हें पंच परमेष्ठी कहते हैं।

अरहंत

जो गृहस्थपना त्यागकर, मुनि धर्म अंगीकार कर, निज स्वभाव साधन द्वारा चार घाति कर्मों का क्षय करके अनंत चतुष्टय (अनंत दर्शन, अनंत ज्ञान, अनंत सुख, अनंत वीर्य) रूप बिराजमान हुए वे अरहंत हैं।

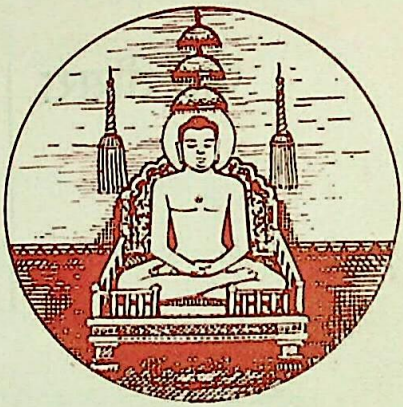

अरहंत परमेष्ठी

शास्त्रों में अरहंत के ४६ गुणों (विशेषणों) का वर्णन है। उनमें कुछ विशेषण तो शरीर से सम्बन्ध रखते हैं और कुछ आत्मा से। ४६ (छयालीस) गुणों में १० तो जन्म के अतिशय हैं, जो शरीर से संबंध रखते हैं। १० केवलज्ञान के अतिशय हैं, वे भी वाह्य पुण्य सामग्री से संबंधित हैं, तथा १४ देवकृत अतिशय तो स्पष्ट देवों द्वारा किए हुए हैं ही। ये सब तीर्थंकर अरहंतों के ही होते हैं, सब अरहंतों के नहीं। आठ प्रातिहार्य भी वाह्य विभूति हैं। किंतु अनंत चतुष्टय आत्मा से संबंध रखते हैं, अतः वे प्रत्येक अरहंत के होते हैं। अतः निश्चय से वे ही अरहंत के गुण हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सिद्ध

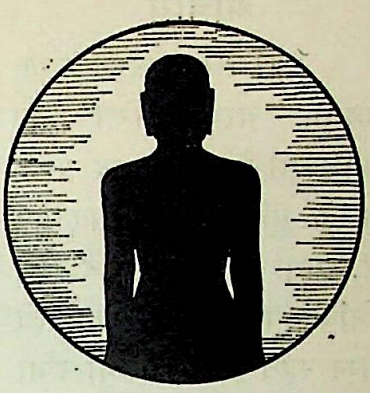

सिद्ध परमेष्ठी

जो गृहस्थ अवस्था का त्यागकर, मुनिधर्म साधन द्वारा चार घाति कर्मों का नाश होने पर अनंत चतुष्टय प्रकट करके कुछ समय बाद अघाति कर्मों के नाश होने पर समस्त अन्य द्रव्यों का संबंध छूट जाने पर पूर्ण मुक्त हो गये हैं; लोक के अग्र-भाग में किंचित् न्यून पुरुषाकार बिराजमान होगये है; जिनके द्रव्यकर्म, भावकर्म, और नोकर्म का अभाव होने से समस्त आत्मिक गुण प्रकट होगये हैं; वे सिद्ध हैं। उनके आठ गुण कहे गये हैं –

समकित दर्शन ज्ञान, अगुरुलघु अवगाहना।
सूक्ष्म वीरजवान, निराबाध गुण सिद्ध के॥

१. क्षायिक सम्यक्त्व ३. अनंत ज्ञान ५. अवगाहनत्व ७. अनंतवीर्य
२. अनंत दर्शन ४. अगुरुलघुत्व ६. सूक्ष्मत्व ८. अव्याबाध

आचार्य, उपाध्याय और साधुओं का सामान्य स्वरूप

आचार्य, उपाध्याय और साधु सामान्य से साधुओं में ही आ जाते हैं। जो विरागी होकर, समस्त परिग्रह का त्याग करके, शुद्धोपयोग रूप मुनिधर्म अंगीकार करके अंतरंग में शुद्धोपयोग द्वारा अपने को आप रूप अनुभव करते हैं; अपने उपयोग को बहुत नहीं भ्रमाते हैं, जिनके कदाचित् मंदराग के उदय में शुभोपयोग भी होता है परन्तु उसे भी हेय मानते हैं, तीव्र कषाय का अभाव होने से अशुभोपयोग का तो अस्तित्व ही नहीं रहता है– ऐसे मुनिराज ही सच्चे साधु हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आचार्य

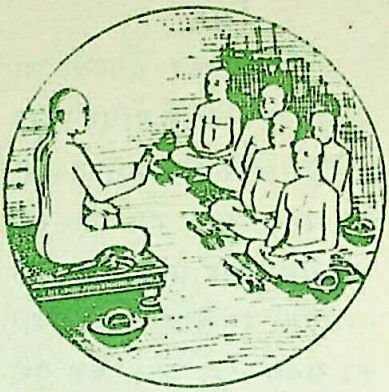

आचार्य परमेष्ठी

जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र की अधिकता से प्रधान पद प्राप्त करके मुनिसंघ के नायक हुए हैं, तथा जो मुख्यपने तो निर्विकल्प स्वरूपाचरण में ही मग्न रहते हैं, पर कभी-कभी रागाँश के उदय से करुणा-बुद्धि हो तो धर्म के लोभी अन्य जीवों को धर्मोपदेश देते हैं, दीक्षा लेने वाले को योग्य जान दीक्षा देते हैं, अपने दोष प्रकट करने वाले को प्रायश्चित् विधि से शुद्ध करते हैं – ऐसा आचरण करने और कराने वाले आचार्य कहलाते हैं।

उपाध्याय

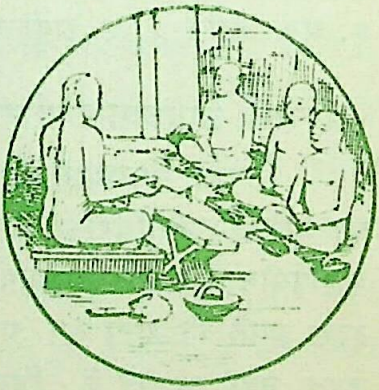

उपाध्याय परमेष्ठी

जो बहुत जैन शास्त्रों के ज्ञाता होकर संघ में पठन-पाठन के अधिकारी हुए हैं, तथा जो समस्त शास्त्रों का सार आत्मस्वरूप में एकाग्रता है; अधिकतर तो उसमें लीन रहते हैं। कभी-कभी कषायाँश के उदय से यदि उपयोग वहाँ स्थिर न रहे तो उन शास्त्रों को स्वयं पढ़ते हैं, औरों को पढ़ाते हैं – वे उपाध्याय हैं। ये मुख्यतः द्वादशाङ्ग के पाठी होते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

साधु

साधु परमेष्ठी

आचार्य उपाध्याय को छोड़कर अन्य समस्त जो मुनि-धर्म के धारक हैं और आत्म-स्वभाव को साधते हैं, वाह्य २८ मूलगुणों को अखंडित पालते हैं, समस्त आरंभ और अंतरंग वहिरंग परिग्रह से रहित होते है, सदा ज्ञानध्यान में लवलीन रहते है, सांसारिक प्रपंचों से सदा दूर रहते हैं, उन्हें साधु परमेष्ठी कहते हैं।

इस प्रकार पंच परमेष्ठी का स्वरूप वीतराग विज्ञानमय है, अतः वे पूज्य हैं।

प्रश्न –

१. पंच परमेष्ठी किसे कहते है ?

२. अरहंत और सिद्ध परमेष्ठियों का स्वरूप लिखकर उनका अन्तर स्पष्ट कीजिए।

३. सामान्य से साधुओं का स्वरूप लिखकर आचार्य साधुओं और उपाध्याय साधुओं का स्वरूप लिखिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठ चौथा

गतियाँ

पुत्र – पिताजी ! आज मन्दिर में सुना था कि "चारों गति के माँहि प्रभु दुःख पायो मैं घणों।" ये चारों गतियाँ क्या हैं जिनमें दुःख ही दुःख है ?

पिता – बेटा ! गति तो जीव की अवस्था-विशेष को कहते हैं। जीव संसार में मोटे तौर पर चार अवस्थाओं में पाये जाते हैं, उन्हें ही चार गतियाँ कहते हैं। जब यह जीव आत्मा को पहिचान कर उसकी साधना करता है तो चतुर्गति के दुःखों से छूट जाता है और अपना अविनाशी सिद्ध पद पा लेता है, उसे पंचम गति कहते हैं।

पुत्र – वे चार गतियाँ कौन-कौन सी हैं ?

पिता – नरक, तिर्यञ्च, देव, और मनुष्य।

पुत्र – मनुष्य तो हम तुम भी हैं न ?

पिता – हम मनुष्यगति में हैं, अतः मनुष्य कहलाते हैं। वैसे हैं तो हम तुम भी आत्मा (जीव)।

मनुष्यगति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जब कोई जीव कहीं से मरकर मनुष्यगति में जन्म लेता है अर्थात् मनुष्य-शरीर धारण करता है तो उसे मनुष्य कहते हैं।

पुत्र – अच्छा तो हम मनुष्य-गति के जीव हैं। गाय, भैंस, घोड़ा आदि किस गति में हैं?

तिर्यञ्चगति

पिता – वे तिर्यञ्च गति के जीव हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, कोड़े-मकोड़े, हाथी, घोड़े, कबूतर, मोर आदि पशु-पक्षी जो तुम्हें दिखाई देते हैं वे सभी तिर्यञ्चगति में आते हैं।

जब कोई जीव मरकर इनमें पैदा होता है तो वह तिर्यञ्च कहलाता है।

पुत्र – जब मनुष्यों को छोड़-कर सब दिखाई देने वाले सभी तिर्यञ्च हैं तो फिर नारकी कौन हैं?

नरकगति

पिता – इस पृथ्वी के नीचे सात नरक हैं। वहाँ का वातावरण बहुत ही कष्टप्रद है। वहाँ पर कहीं शरीर को जला देने वाली भयंकर गर्मी और

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहीं शरीर को गला देने वाली भंयकर सर्दी पड़ती है। भोजन, पानी का सर्वथा अभाव है। वहाँ जीवों को भयंकर भूख, प्यास की वेदना सहनी पड़ती है। वे लोग तीव्र कषायी भी होते हैं, आपस में लड़ते-झगड़ते रहते हैं, मारकाट मची रहती है।

जो जीव मरकर ऐसे संयोगों में जन्म लेते हैं, उन्हें नारकी कहते हैं।

पुत्र – और देव··· ·····?

पिता – जैसे जिन जीवों के भाव होते हैं उनके अनुसार उन्हें फल भी मिलता है। उनका उन्हें फल मिले ऐसे स्थान भी होते हैं। जैसे पाप का फल भोगने का स्थान नरकादि गति है, उसी प्रकार जो जीव पुण्य भाव करता है उनका फल भोगने का स्थान देवगति है। देवगति में मुख्यतः भोग-सामग्री प्राप्त रहती है।

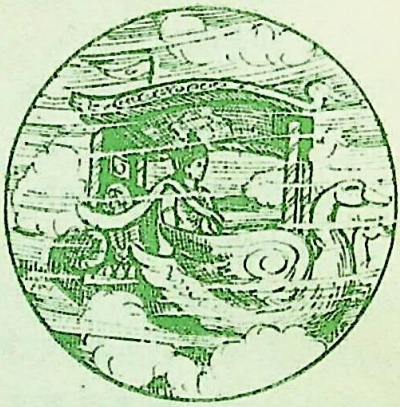

देवगति

जो जीव मरकर देवों में जन्म लेते हैं, उन्हें देवगति के जीव कहते है।

पुत्र – अच्छी गति कौनसी है ?

पिता – जब बता दिया कि चारों गति में दुःख ही है तो फिर गति अच्छी कैसे होगी ? ये चारों संसार हैं।

इसे छोड़कर जो मुक्त हुए वे सिद्ध जीव पंचम गति वाले हैं। एक मात्र पूर्ण आनन्दमय सिद्धगति ही है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुत्र – मनुष्यगति को अच्छी कहो न ? क्योंकि इससे ही मोक्ष-पद मिलता है।

पिता – यदि यह अच्छी होती तो सिद्ध जीव इसका भी परित्याग क्यों करते ? अतः चतुर्गति का परिभ्रमण छोड़ना ही अच्छा है।

पुत्र – जब इन गतियों का चक्कर छोड़ना ही अच्छा है तो फिर यह जीव इन गतियों में घूमता ही क्यों है ?

पिता – जब अपराध करेगा तो सज़ा भोगनी ही पड़ेगी।

पुत्र – किस अपराध के फल से कौनसी गति प्राप्त होती है ?

पिता – बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रह रखने का भाव ही ऐसा अपराध है जिससे इस जीव को नरक जाना पड़ता है तथा भावों की कुटिलता अर्थात् मायाचार, छल-कपट तिर्यञ्चायु के बंध के कारण हैं।

पुत्र – मनुष्य तथा देव·····?

पिता – अल्प आरंभ और अल्प परिग्रह रखने का भाव और स्वभाव की सरलता मनुष्यायु के बंध के कारण हैं। इसी प्रकार संयम के साथ रहने वाला शुभ भावरूप रागांश और असंयमांश मंद कषायरूप भाव तथा अज्ञानपूर्वक किये गए तपश्चरण के भाव देवायु के बंध के कारण हैं।

पुत्र – उक्त भाव बंध के कारण होने से अपराध ही हैं तो फिर निरपराध दशा क्या है ?

पिता – एक वीतराग भाव ही निरपराध दशा है, अतः वह मोक्ष का कारण है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुत्र – इन सबके जानने से क्या लाभ है ?

पिता – हम यह जान जावेंगे कि चारों गतियों में दुःख ही है, सुख नहीं और चतुर्गति भ्रमण का कारण शुभाशुभ भाव है, इनसे छूटने का उपाय एक वीतराग भाव है। हमें वीतराग भाव प्राप्त करने के लिये ज्ञानस्वभावी आत्मा का आश्रय लेना चाहिये।

प्रश्न –

१. गति किसे कहते हैं ? वे कितने प्रकार की होती हैं ?

२. तिर्यञ्चगति किसे कहते हैं ?

३. नरकगति के वातावरण का वर्णन कीजिये। ऐसे कौन से कारण हैं जिनसे जीव नरकगति प्राप्त करता है ?

४. क्या देवगति में भी सुख नहीं है ? सकारण उत्तर दीजिये।

५. सबसे अच्छी गति कौनसी है ? युक्तिसंगत उत्तर दीजिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठ पांचवाँ

सदाचार

(भक्ष्याभक्ष्य विचार)

सुबोध – क्यों भाई प्रबोध ! कहाँ जा रहे हो ? चलो आज तो चौराहे पर आलू की चाट खायेंगे। बहुत दिनों से नहीं खाई है।

प्रबोध – चौराहे पर और आलू की चाट ! हमें कोई भी चीज़ बाज़ार में नहीं खाना चाहिये और आलू की चाट भी कोई खाने की चीज़ है ? याद नहीं, कल गुरुजी ने कहा था कि आलू तो अभक्ष्य है ?

सुबोध – यह अभक्ष्य क्या होता है, मेरी तो समझ में नहीं आता। पाठशाला में पण्डितजी कहते हैं–यह नहीं खाना चाहिये, वह नहीं खाना चाहिए। औषधालय में वैद्यजी कहते हैं– यह नहीं खाना, वह नहीं खाना। अपने को तो कुछ पसंद नहीं। जो मन में आए सो खाओ और मौज से रहो।

प्रबोध – जो खाने योग्य सो भक्ष्य और जो खाने योग्य नहीं सो अभक्ष्य। यही तो कहते हैं कि अपनी आत्मा इतनी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पवित्र बनाओ कि उसमें अभक्ष्य के खाने का भाव (इच्छा) आवे ही नहीं। यदि पण्डितजी कहते हैं कि अभक्ष्य का भक्षण मत करो तो तुम्हारे हित की ही कहते हैं क्योंकि अभक्ष्य खाने से और खाने के भाव से आत्मा का पतन होता है।

सुबोध – तो कौन-कौन से पदार्थ अभक्ष्य हैं ?

प्रबोध – जिन पदार्थों के खाने से त्रस जीवों का घात होता हो या बहुत से स्थावर जीवों का घात होता हो तथा जो भले पुरुषों के सेवन करने योग्य न हों, वे सब अभक्ष्य हैं। इन अभक्ष्यों को चार भागों में बांटा जाता है।

सुबोध – कौन-कौन से ?

प्रबोध – १. त्रसघात ३. अनुपसेव्य
२. बहुघात ४. नशाकारक

जिन पदार्थों के खाने से त्रस जीवों का घात होता हो उन्हें त्रसघात कहते हैं। जैसे पंच उदुम्बर फल (बड़ फल, पीपल फल, ऊमर, कठूमर, अंजीर)। इन पदार्थों में बहुत से त्रस जीवों की निरन्तर उत्पत्ति होती रहती है, इन्हें कभी नहीं खाना चाहिए।

जिन पदार्थों के खाने से बहुत (अनंत) स्थावर जीवों का घात होता हो उन्हें बहुघात कहते हैं। समस्त कंदमूल जैसे आलू, गाजर, मूली, शकरकंदी, लहसन, प्याज आदि पदार्थों में अनंत स्थावर निगोदिया जीव रहते हैं। इनके खाने से अनंत जीवों का घात होता है, अतः इन्हें भी नहीं खाना चाहिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुबोध – और अनुपसेव्य ?

प्रबोध – जिनका सेवन उत्तम पुरुष बुरा समझें, वे लोकनिंद्य पदार्थ ही अनुपसेव्य हैं। जैसे लार, मल-मूत्र आदि पदार्थ।

अनुपसेव्य पदार्थों का सेवन लोकनिंद्य होने से तीव्र राग के बिना नहीं हो सकता है, अतः वह भी अभक्ष्य है।

तथा जो वस्तुएं नशा बढ़ाने वाली हों उन्हें नशाकारक अभक्ष्य कहते हैं। जैसे शराब, अफीम, भंग, गाँजा, तम्बाकू आदि। अतः इनका भी सेवन नहीं करना चाहिये।

सुबोध – अच्छा, आज से मैं भी किसी भी अभक्ष्य पदार्थ को काम में नहीं लूंगा (भक्षण नहीं करूंगा)। मैं तुम्हारा उपकार मानता हूँ, जो तुमने मुझे अभक्ष्य भक्षण के महापाप से बचा लिया।

प्रश्न –

१. अभक्ष्य किसे कहते हैं ? वे कितने प्रकार के होते हैं ?

२. अनुपसेव्य से क्या समझते हो ? उसके सेवन से हिंसा कैसे होती है ?

३. किन्हीं चार बहुघात के नाम गिनाइये।

४. नशाकारक अभक्ष्य से क्या समझते हो ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठ छठवाँ

द्रव्य गुण पर्याय

छात्र – गुरुजी आज अखबार में देखा था कि अब ऐसे अणुबम बन गये हैं कि यदि लड़ाई छिड़ गई तो विश्व का नाश हो जायगा।

अध्यापक – क्या विश्व का भी कभी नाश हो सकता है ? विश्व तो छह द्रव्यों के समुदाय को कहते हैं और द्रव्यों का कभी नाश नहीं होता है, मात्र पर्याय पलटती है।

छात्र – विश्व तो द्रव्यों के समूह को कहते हैं और द्रव्य ?

अध्यापक – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

छात्र – मन्दिरजी में सूत्रजी के प्रवचन में तो सुना था कि द्रव्य, गुण और पर्यायवान होता है (गुण पर्ययवद् द्रव्यम्)।

अध्यापक – ठीक तो है, गुणों में होने वाले प्रति समय के परिवर्तन को ही तो पर्याय कहते हैं। अतः द्रव्य को गुणों का समुदाय कहने में पर्यायें आ ही जाती हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छात्र – गुणों के परिणमन को पर्याय कहते हैं, यह तो समझा पर गुण किसे कहते हैं ?

अध्यापक – जो द्रव्य के सम्पूर्ण भागों (प्रदेशों) में और उसकी सम्पूर्ण अवस्थाओं (पर्यायों) में रहता है, उसको गुण कहते हैं। जैसे ज्ञान आत्मा का गुण है, वह आत्मा के समस्त प्रदेशों में तथा निगोद से लेकर मोक्ष तक की समस्त हालतों में पाया जाता है। अतः आत्मा को ज्ञानमय कहा जाता है।

छात्र – आत्मा में ऐसे कितने गुण हैं ?

अध्यापक – आत्मा में ज्ञान जैसे अनंत गुण हैं, आत्मा में ही क्या समस्त द्रव्यों में, प्रत्येक में, अपने-अपने अलग-अलग अनंत-अनंत गुण हैं।

छात्र – तो हमारा आत्मा अनंत गुणों का भंडार है ?

अध्यापक – भंडार क्या ? ऐसा थोड़े ही है कि आत्मा अलग हो और गुण उसमें भरे हों, जो उसे गुणों का भंडार कहें, वह तो गुणमय ही है, वह तो गुणों का अखण्ड पिण्ड है।

छात्र – वे अनंत गुण कौन-कौन से हैं ?

अध्यापक – क्या बात करते हो, क्या अनंत भी गिनाये या बताए जा सकते हैं ?

छात्र – कुछ तो बताइये ?

अध्यापक – गुण दो प्रकार के होते हैं, सामान्य गुण और विशेष गुण।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो गुण सब द्रव्यों में रहते हैं उनको सामान्य गुण कहते हैं और जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्य में हों उन्हें विशेष गुण कहते हैं। जैसे अस्तित्व गुण सब द्रव्यों में पाया जाता है, अतः वह सामान्य गुण हुआ और ज्ञान गुण सिर्फ आत्मा में ही पाया जाता है, अतः जीव द्रव्य का विशेष गुण हुआ।

छात्र – सामान्य गुण कितने होते हैं ?

अध्यापक – अनेक, पर उनमें छह मुख्य हैं – अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व और प्रदेशत्व।

जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कभी भी अभाव (नाश) न हो उसे अस्तित्व गुण कहते हैं। प्रत्येक द्रव्य में अस्तित्व गुण है, अतः प्रत्येक द्रव्य की सत्ता स्वयं से है, उसे किसी ने बनाया नहीं है और न उसे कोई मिटा ही सकता है क्योंकि वह अनादि अनंत है।

इसी अस्तित्व गुण की अपेक्षा तो द्रव्य का लक्षण "सत्" किया जाता है, "सत् द्रव्यलक्षणम्" और सत् का कभी विनाश नहीं होता, तथा असत् का कभी उत्पाद् नहीं होता। मात्र पर्याय पलटती है।

छात्र – और वस्तुत्व·····?

अध्यापक – जिस शक्ति के कारण द्रव्य में अर्थ क्रिया (प्रयोजन-भूत क्रिया) हो, उसे वस्तुत्व गुण कहते हैं। वस्तुत्व गुण की मुख्यता से ही द्रव्य को वस्तु कहते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कोई भी वस्तु लोक में पर के प्रयोजन की नहीं है, पर प्रत्येक वस्तु अपने-अपने प्रयोजन से युक्त है, क्योंकि उसमें वस्तुत्व गुण है।

छात्र – द्रव्यत्व गुण किसे कहते हैं ?

अध्यापक – जिस शक्ति के कारण द्रव्य की अवस्था निरन्तर बदलती रहे उसे द्रव्यत्व गुण कहते हैं। द्रव्यत्व गुण की मुख्यता से वस्तु को द्रव्य कहते हैं। एक द्रव्य में परिवर्तन का कारण कोई दूसरा द्रव्य नहीं है क्योंकि उसमें द्रव्यत्व गुण है, अतः उसे परिणमन करने में पर की अपेक्षा नहीं है।

छात्र – इन तीनों गुणों में अन्तर क्या हुआ ?

अध्यापक – अस्तित्वगुण तो मात्र "है" यह बतलाता है, वस्तुत्व गुण "निरर्थक नहीं है" यह बताता है और द्रव्यत्व गुण "निरंतर परिणमनशील है" यह बताता है।

छात्र – प्रमेयत्व गुण किसे कहते हैं ?

अध्यापक – जिस शक्ति के कारण द्रव्य किसी न किसी ज्ञान का विषय हो उसे प्रमेयत्व गुण कहते हैं।

छात्र – बहुत सी वस्तुएँ बहुत सूक्ष्म होती हैं, अतः वे समझ में नहीं आ सकतीं क्योंकि वे दिखाई ही नहीं देती हैं। जैसे हमारी आत्मा ही है, उसे कैसे जानें, वह तो दिखाई देती ही नहीं है ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अध्यापक – भाई ! प्रत्येक द्रव्य में ऐसी शक्ति है कि वह अवश्य ही जाना जा सकता है, यह बात अलग है कि वह इन्द्रियज्ञान द्वारा पकड़ में न आवे। यह तो हमारे ज्ञान की कमी के कारण है। जिनका ज्ञान पूरा विकसित हुआ है उनके ज्ञान (केवलज्ञान) में सब कुछ आ जाता है और अन्य ज्ञानों में अपनी-अपनी योग्यतानुसार आता है। अतः जगत् का कोई भी पदार्थ अज्ञात रहे ऐसा नहीं बन सकता है।

छात्र – अगुरुलघुत्व गुण किसे कहते हैं ?

अध्यापक – जिस शक्ति के कारण द्रव्य में द्रव्यपन कायम रहता है, अर्थात् एक द्रव्य दूसरे द्रव्य रूप नहीं हो जाता, एक गुण दूसरे गुण रूप नहीं होता और द्रव्य में रहने वाले अनंत गुण बिखर कर अलग-अलग नहीं हो जाते, उसे अगुरुलघुत्व गुण कहते हैं।

छात्र – और प्रदेशत्व.....?

अध्यापक – जिस शक्ति के कारण द्रव्य का कोई न कोई आकार अवश्य रहता है उसको प्रदेशत्व गुण कहते हैं।

छात्र – सामान्य गुण तो समझ गया पर विशेष गुण और समझाइये।

अध्यापक – बताया था न, कि जो सब द्रव्यों में न रहकर अपने-अपने द्रव्यों में ही रहते हैं वे विशेष गुण हैं। जैसे जीव के ज्ञान, दर्शन, चारित्र, सुख आदि। पुद्गल में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आदि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छात्र – द्रव्य, गुण, पर्याय के जानने से लाभ क्या है ?

अध्यापक – हम तुम भी तो जीव द्रव्य हैं, और द्रव्य गुणों का पिण्ड होता है अतः हम भी गुणों के पिण्ड हैं। ऐसा ज्ञान होने पर "हम दीन गुणहीन हैं"– ऐसी भावना निकल जाती है तथा मेरे में अस्तित्व गुण है अतः मेरा कोई नाश नहीं कर सकता है, ऐसा ज्ञान होने पर अनंत निर्भयता आजाती है।

ज्ञान हमारा गुण है उसका कभी नाश नहीं होता। अज्ञान और राग-द्वेष आदि स्वभाव से विपरीतभाव (विकारी पर्याय) हैं, इसलिए आत्मा के आश्रय से उनका अभाव हो जाता है।

प्रश्न –

१. द्रव्य किसे कहते हैं ?

२. गुण किसे कहते हैं ? वे कितने प्रकार के होते हैं ?

३. सामान्य गुण किसे कहते हैं ? वे कितने हैं ? प्रत्येक की परिभाषा लिखिए।

४. विशेष गुण किसे कहते हैं ? जीव और पुद्गल के विशेष गुण बताइए।

५. पर्याय किसे कहते हैं ?

६. द्रव्य गुण पर्याय समझने से क्या लाभ है ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठ सातवाँ

भगवान नेमिनाथ

बहिन – भाई साहब ! सुना है भगवान नेमिनाथ अपनी पत्नी राजुल को बिलखती छोड़कर चले गये थे।

भाई – भगवान नेमिनाथ तो बालब्रह्मचारी थे। उनकी तो शादी ही नहीं हुई थी। अतः पत्नी को छोड़कर जाने का प्रश्न ही नहीं उठता।

बहिन – फिर लोग ऐसा क्यों कहते हैं ?

भाई – बात यह है कि नेमिकुमार जब राजकुमार थे तब उनकी सगाई जूनागढ़ के राजा उग्रसेन की पुत्री राजुल (राजमती) से हो गई थी। पर जब नेमिकुमार की बरात जा रही थी तब मरणासन्न निरीह मूक पशुओं को देख, संसार का स्वार्थपन और क्रूरपन लक्ष्य में आते ही, उनको संसार और भोगों से वैराग्य हो गया था। वे आत्मज्ञानी तो थे ही, अतः उसी समय समस्त वाह्य परिग्रह माता-पिता, धन-धान्य, राज्य आदि तथा अंतरंग परिग्रह राग-द्वेष का त्यागकर नग्न दिगम्बर साधु हो गये थे। बरात छोड़ गिरनार की तरफ चले गये थे।

इसी कारण लोग कहते हैं कि वे पत्नी राजुल को छोड़ गये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

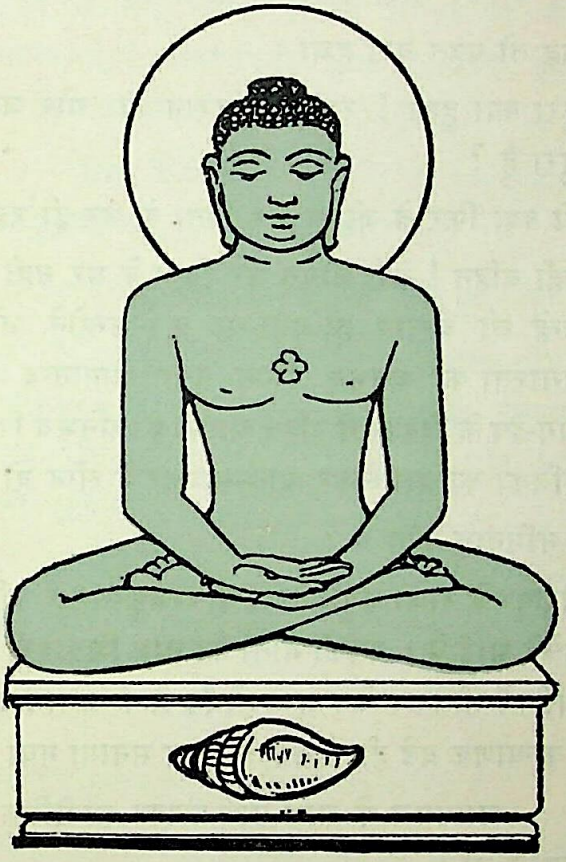

भगवान नेमिनाथ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहिन – जब नेमिनाथ चले गये फिर···राजुल की शादी···?

भाई – नहीं बहिन ! राजुल भी तत्त्वप्रेमी राजकुमारी थी। उक्त घटना का निमित्त पाकर राजुल की आत्मा भी वैरागी हो गई। उनके पिताजी ने उन्हें बहुत समझाया पर वे फिर शादी करने को राजी नहीं हुईं।

बहिन – यह तो बहुत बुरा हुआ।

भाई – बुरा क्या हुआ ! राग से विराग की ओर जाना क्या बुरा है ?

बहिन – तो क्या फिर वे जीवन भर पिता के घर ही रहीं ?

भाई – नहीं बहिन ! बेटी जीवन भर पिता के घर नहीं रहती। उन्हें तो वैराग्य हो गया था न। उन्होंने भोगों की असारता का अनुभव किया तथा ज्ञानानन्द स्वभावी राग-द्वेष के विकार से रहित आत्मा का अनुभव किया और अर्जिका का व्रत लेकर आत्मसाधना में लीन हो गईं।

बहिन – ये नेमिनाथ कौन थे ?

भाई – सौरीपुर के राजा समुद्रविजय के राजकुमार थे, श्रीकृष्ण के चचेरे भाई थे। इनकी माता का नाम शिवादेवी था। ये बाईसवें तीर्थंकर थे। अन्य तीर्थंकरों के समान इनका भी जन्म कल्याणक बड़े ही उत्साह के साथ मनाया गया था।

आत्मबल के साथ-साथ उनका शारीरिक बल भी अतुल्य था।

उन्होंने राजकाज और विषयभोग को अपना कार्य-क्षेत्र न बनाकर गिरनार की गुफाओं में शान्ति से आत्म-साधना करना ही अपना ध्येय बनाया। उन्होंने समस्त जगत् से अपने उपयोग को हटाकर एकमात्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ज्ञानानन्द स्वभावी अपनी आत्मा में लगाया। आत्म-ज्ञानी तो वे पहिले से थे ही, आत्म-स्थिरता रूप चारित्र की श्रेणियों में बढ़ते हुए दीक्षा के ५६ दिन बाद आत्म-साधना की चरम परिणति क्षपक श्रेणी आरोहण कर केवलज्ञान (पूर्ण ज्ञान) प्राप्त किया। तदनन्तर करीब सात सौ वर्ष तक लगातार समवशरण सहित सारे भारतवर्ष में उनका विहार होता रहा तथा उनकी दिव्य ध्वनि द्वारा तत्त्व-प्रचार होता रहा।

अन्त में गिरनार पर्वत से ही एक हजार वर्ष की आयु पूरी कर मुक्ति प्राप्त की।

बहिन – तो गिरनारजी "सिद्धक्षेत्र" इसीलिए कहलाता होगा ?

भाई – हाँ, गिरनार पर्वत नेमिनाथ की निर्वाण-भूमि ही नहीं, तपो-भूमि भी है। राजुल ने भी वहीं तपस्या की थी तथा श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न कुमार और शम्बु कुमार भी वहीं से मोक्ष गये थे।

जैन समाज में शिखरजी के पश्चात् गिरनार सिद्धक्षेत्र का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है।

प्रश्न –

१. भगवान नेमिनाथ का संक्षिप्त परिचय दीजिये।

२. भगवान नेमिनाथ की तपो-भूमि और निर्वाण-भूमि का परिचय दीजिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाठ आठवाँ

जिनवाणी स्तुति

वीर हिमाचलतैं निकसी, गुरु गौतम के मुख कुंड ढरी है।
मोह महाचल भेद चली, जग की जड़तातप दूर करी है॥
ज्ञान पयोनिधि माँहि रली, बहु भंग तरंगनिसों उछरी है।
ता शुचि शारद गंग नदी प्रति, मैं अंजुलिकर शीश धरी है॥१॥

या जगमंदिर में अनिवार, अज्ञान अंधेर छयो अति भारी।
श्री जिन की धुनि दीपशिखा सम, जो नहिं होत प्रकाशन-हारी॥
तो किस भांति पदारथ पाँति, कहाँ लहते रहते अविचारी।
या विधि संत कहें धनि हैं, धनि हैं जिन वैन बड़े उपकारी॥२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यह जिनवाणी की स्तुति है। इसमें दीपशिखा के समान अज्ञानाधंकार को नाश करने वाली पवित्र जिनवाणी-रूपी गंगा को नमस्कार किया गया है।

जिनवाणी अर्थात् जिनेन्द्र भगवान द्वारा दिया गया तत्त्वोपदेश, उनके द्वारा बताया गया मुक्ति का मार्ग।

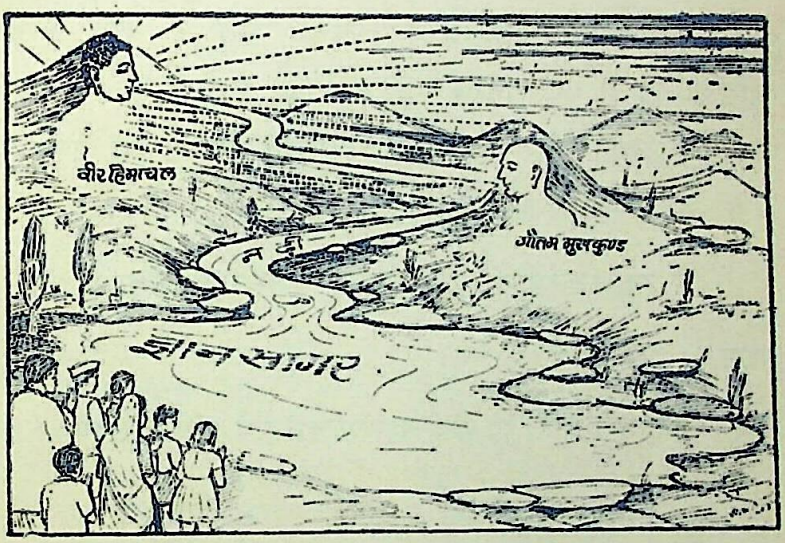

हे जिनवाणी-रूपी पवित्र गंगा ! तुम महावीर भगवान रूपी हिमालय पर्वत से प्रवाहित होकर गौतम गणधर के मुख-रूपी कुण्ड में आई हो। तुम मोहरूपी महान् पर्वतों को भेदती हुई जगत् के अज्ञान और ताप (दुःखों) को दूर कर रही हो। सप्तभंगी रूप नयों की तरंगों से उल्लसित होती हुई ज्ञानरूपी समुद्र में मिल गई हो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसी पवित्र जिनवाणी-रूपी गंगा को मैं अपनी बुद्धि और शक्ति अनुसार अञ्जलि में धारण करके शीश पर धारण करता हूँ ।।१।।

इस संसाररूपी मंदिर में अज्ञानरूपी घोर अंधकार छाया हुआ है। यदि उस अज्ञानाधंकार को नष्ट करने के लिए जिनवाणी रूपी दीपशिखा नहीं होती तो फिर तत्त्वों का वास्तविक स्वरूप किस प्रकार जाना जाता ? वस्तु स्वरूप अविचारित ही रह जाता। अतः संत कवि कहते हैं कि जिनवाणी बड़ी ही उपकार करने वाली है, जिसकी कृपा से हम तत्त्व का सही स्वरूप समझ सके ।।२।।

मैं उस जिनवाणी को बारंबार नमस्कार करता हूँ ।

प्रश्न –

१. जिनवाणी स्तुति की कोई चार पंक्तियाँ अर्थ सहित लिखिये ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्री वीतराग विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड

बालबोध पाठमाला भाग ३

समय : २½ घंटे प्रश्न-पत्र पूर्णांक : १००

नोट – सब प्रश्नों के अंक समान हैं, तथा शुद्धता एवं स्वच्छता के लिये ४ अंक नियत हैं।

१. "देव-दर्शन" पाठ में से जो भी छन्द तुम्हें सबसे अच्छा लगा हो अर्थ सहित लिखो। अच्छे लगने का कारण भी बताइये।

अथवा

जिनवाणी स्तुति का कोई एक छन्द अर्थ सहित लिखिये।

२. किन्हीं चार का उत्तर दीजिए :–

(i) निश्चय से आवश्यक क्या है ? (ii) निरपराध दशा क्या है ? (iii) क्या देव गति में भी सुख नहीं है ? सकारण उत्तर दीजिये। (iv) विशेष गुण किसे कहते हैं ? उदाहरण देकर समझाइये। (v) गिरनार सिद्ध क्षेत्र क्यों कहलाता है ? (vi) पंचपरमेष्ठी किसे कहते हैं ?

३. किन्हीं चार की परिभाषायें दीजिए :–

अरहंत परमेष्ठी, संयम आवश्यक, गति, विश्व, गुण, प्रमेयत्व गुण।

४. किन्हीं चार का संक्षिप्त उत्तर दीजिए :–

१. अभक्ष्य कितने प्रकार के होते हैं ? प्रत्येक को समझाइये।
२. भगवान नेमिनाथ का संक्षिप्त परिचय दीजिये।
३. सामान्य गुण कितने होते हैं ? कोई दो समझाइये।
४. नरक गति व तिर्यञ्च गति में जीव को क्यों जाना पड़ता है ?
५. आचार्य, उपाध्याय और साधुपरमेष्ठी का सामान्य स्वरूप लिखिए।
६. अरहंत के गुण कितने हैं ? उनके बारे में आप क्या समझते हैं ?

५. किन्हीं चार वाक्यों के रिक्त स्थानों की पूर्ति अपनी पाठ्यपुस्तक के आधार पर कीजिये :–

(i) ज्ञानी श्रावक के योग्य आंशिक शुद्धि·····अपने को·····का दान है।
(ii) दश जन्म के अतिशय तो·····से सम्बन्ध रखते हैं।
(iii) ·····के परिणमन को·····कहते हैं।
(iv) वस्तुत्व गुण "·····" यह बताता है।
(v) द्रव्य को·····का समुदाय कहने में·····आ ही जाती है।
(vi) वीतराग भाव प्राप्त करने के लिए·····का आश्रय करना चाहिए।

६. निम्नलिखित पाठों में से किसी एक पाठ का सारांश अपने शब्दों में लिखिए :–

१. पंचपरमेष्ठी २. द्रव्य गुण पर्याय ३. गतियाँ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हमारे प्रकाशन

	रु० पै०
१. जयपुर (खानिया) तत्त्वचर्चा भाग १	८ – ००
२. जयपुर (खानिया) तत्त्वचर्चा भाग २	८ – ००
३. मोक्षमार्ग प्रकाशक	२ – ००
४. अध्यात्म संदेश	१ – ५०
५. टोडरमल जयंती स्मारिका	१ – ००
६. बालबोध पाठमाला भाग १	० – ४०
७. बालबोध पाठमाला भाग २	० – ५०
८. बालबोध पाठमाला भाग ३	० – ५५
९. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग १	० – ५०
१०. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग २	० – ६५
११. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग ३	प्रेस में
१२. तत्त्व निर्णय	० – २०
१३. शास्त्रों के अर्थ समझने की पद्धति	० – १२
१४. मुक्ति का मार्ग	० – ५०
१५. पद्मनंदि पंचविंशतिका (वृषभ जिनस्तोत्र) प्रवचन	० – २०

नोट – उक्त पुस्तकों के अतिरिक्त सोनगढ़ द्वारा प्रकाशित सम्पूर्ण साहित्य भी हमारे यहां मिलता है।

मंत्री
श्री टोडरमल ग्रंथमाला
श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए - ४, बापूनगर,
जयपुर - ४ (राजस्थान)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi